हिन्दी विभाग

डॉ० कविता कुमारी सिंह

P.G. II sem

विषय — संस्कृत का नाट्य साहित्य

प्रत्येक साहित्य में नाटक का अपना विशिष्ट महत्व है। काव्य की अपेक्षा नाटक इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि काव्य श्रवण के माध्यम से रसानन्द देता है और नाटक नेत्रों द्वारा प्रत्यक्षीकरण कराकर रसानन्द प्राप्त कराता है। वस्तुतः किसी वस्तु को देखने का आनन्द उसके सुनने की अपेक्षा कहीं अधिक होता है। काव्य में रसानुभूति के लिए अ[र्थ] को समझना नितान्त आवश्यक है, परन्तु नाटक में उसकी अपेक्षा नहीं होती। अतः नाटक की समता [illegible] से की जाती है। जिसप्रकार चित्रकार चित्र के विभि[न्न] रंगों के सम्मिश्रण से सहृदय दर्शकों के चित्त [में] रस का स्रोत बहाता है, ठीक उसी प्रकार नाटक[कार] नाटक की वेष-भूषा, नेपथ्य, साज-सज्जा आ[दि] उचित संसाधनों से दर्शकों के हृदय पर अमिट [छाप] डालता है तथा उसके हृदय पर आनन्द का —

कराता है। पद्मभूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय ने संस्कृत नाटकों की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए लिखा है- "नाटक संस्कृत-साहित्य का एक गौरवपूर्ण अंग है। नाटकों में इस साहित्य का वह महत्व है, जिससे उसकी कृति कौमुदी संसार भर में चमकने लगी है। जिस ग्रन्थ ने भारतीय साहित्य के सौन्दर्य को, कोमल कल्पना तथा मनोहर रस परिपाक को संसार के मनीषियों के सामने अभिव्यक्त कि वह महाकवि कालिदास के द्वारा रचित नाटक (अभिज्ञान शाकुन्तलम्) ही था।"

संस्कृत- वाङ्मय में नाटकों की उत्पत्ति बहु प्राचीन काल से मानी जाती है। ऋग्वेद के सूक्तों से इसका प्रचलन है। इन्हीं सूक्तों को सम्वाद सूक्त कहते पाणिनी ने । अष्टाध्यायी' में शिलाली और कृशाश्व के नट सूत्रों का उल्लेख किया है, जिससे सिद्ध होता है कि नटों की शिक्षा के लिए स्वतंत्र सूत्र ग्र की रचना होने लगी थी। डॉ० रिजवे ने नाटक की उत्पत्ति 'वीर-पूजा' से सम्बद्ध माना है किन्तु जर्मन डॉ० पिशेल नाटक की उत्पत्ति पुत्तलिका नृत्य हुई। कुछ विद्वानों की सम्मति से नाटक

की उत्पत्ति छाया नाटकों से हुई। वस्तुतः नाटकों की उत्पत्ति का इतिहास मानवीय अभिव्यक्ति का इतिहास से सम्बद्ध है। वाणी की नाटकीयता ही अभिव्यक्ति को विशेष बनाती है।

संस्कृत नाटक के इतिहास का प्रारम्भ इतिहासकारों ने 'भास' के नाटकों से माना है। भास के पश्चात कालिदास विशाखदत्त शूद्रक, हर्षवर्द्धन, भट्टनारायण तथा भवभूति जैसे प्रसिद्ध नाटककारों का योगदान के उत्कर्ष का

यद्यपि नाटककार 'भास' के संबंध में इतिहासकारों के दृष्टिकोण में मतभेद है तथापि उनके ना से ही संस्कृत नाटकों का विधिवत प्रचार-प्रसार जाता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपने त के आधार पर 'भास' का समय पंचम शती या शती वि० पू० माना है। उन्होंने भास के नाटकों विषयानुसार पाँच वर्गों में विभाजित किया है

(1) रामकथाश्रित (2) महाभारताश्रित (3) भागवत

(4) उदयन कथाश्रित (5) बाल-चरित।
(कल्पित)

भास के अनुसार संसार बड़ा ही उनके नाटकों में जहाँ नाटकीय तत्वों का संयोजन है, वहाँ उसमें अभिनेयता भी है। न तो कहीं कथावस्तु का अनावश्यक

है और न पात्रों के संवादों में विस्तार है। पात्रों के शील-निरूपण की दृष्टि से भरत के पात्र सजीव व्यक्ति हैं। उनके नाटकों में विषयानुसार अनेक रसों का उन्मीलन है, जिसमें वीर और श्रृंगार का प्राधान्य है। साथ ही भाषा के नाटकीय संवाद चुस्त, संक्षिप्त, सरल व प्रभावोत्पादक हैं। और उनकी शैली में क्लिष्टकल्पना, दुरूह, समस्त पदावली एवं विकट बंधता का अभाव है। भावों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हेतु भरत ने उपमा, रूपक व उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का प्रयोग किया है और कुछ पात्रों की मृत्यु का दृश्य रंगमंच पर दिखाते हुए भी उनके नाटकों में अभिनेयता है। अतः नाट्यकला की दृष्टि से भरत पूर्ण सफल रहे हैं।